Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 GISRRJ | Volume 2 | Issue 3 | ISSN : 2582-0095

भारतीय काव्यशास्त्र में रीति सम्प्रदाय की अवधारणा एवं उसके विविध आयामों का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ0 अनिल कुमार सिंह
एसोशिएट प्रोफेसर : हिन्दी–विभाग,
का0सु0 साकेत पी0जी0 कालेज, अयोध्या, फैजाबाद, उत्तर प्रदेश।

Article Info
Volume 2 Issue 3
Page Number : 125-129

Publication Issue :
May-June-2019

Article History
Accepted : 20 June 2019
Published : 30 June 2019

सारांश : काव्य–रचना–प्रक्रिया भाषा के माध्यम से चलती है। हमारा समूचा जीवन व्यवहार ही भाषा के माध्यम से परिचालित होता है। रोजमर्रा की प्रचलित भाषा हमें विरासत में उपलब्ध होती है और इसी भाषा सामग्री को हम अपने अनुभव, विचार आदि को दूसरों तक संप्रेषित करने के लिए उपयोग में लाते हैं। लोक व्यवहार में प्रचलित विरासत में मिली इसी भाषा का प्रयोग कवि भी अपनी काव्य रचना में करता है। अपनी रचना प्रक्रिया के क्रम में कवि इस भाषा के विन्यास को किसी विशिष्ट संवेदना या अनूभूति की अभिव्यक्ति के लिए किंचित तोड़–फोड़ देता है। इस तोड़–फोड़ से भाषा के पद या पद–समूह किन्हीं विशिष्ट अर्थवक्ताओं से प्रदीप्त हो उठते हैं और उनमें सौंदर्य और रमणीयता उत्पन्न हो जाती है। कवि के लिए भाषा के रूप का नहीं उसके स्वरूप का महत्व होता है। किसी खास संवेदना की अभिव्यक्ति के लिए विशिष्ट–पद रचना द्वारा प्रचलित भाषा के स्वरूप में हुए परिर्वतन से उत्पन्न अर्थ और उस खास संवेदना का पाठकों तक संप्रेषण और समान उद्दीपन रचना प्रक्रिया का अनिवार्य अंग है। भारतीय काव्यशास्त्रियों ने कवि की अनुभूति को विशिष्ट पद–रचना द्वारा अभिव्यक्त करने के इस क्रम को मार्ग या रीति की संज्ञा दी है। पाश्चात्य् काव्य चिन्तन में इसे ही शैली (Style) की संज्ञा दी गयी है।

बीज–शब्द : रीति, शैली, काव्यशास्त्र, विशिष्ट पद–रचना, वामन, मम्मट, राजेशखर, कुन्तक।

काव्य रचना की इस 'रीति' का अध्ययन रीति सम्प्रदाय में किया गया है। रीति–सिद्धान्त–सम्बन्धी चर्चा करने वाला शास्त्र ही रीतिशास्त्र है। रीति सम्प्रदाय की परम्परा हिन्दी को संस्कृत सम्प्रदाय से प्राप्त हुई है। भारतीय काव्यशास्त्र में रीति के स्वरूप की चर्चा नाटक तथा काव्य को ध्यान में रखकर की गई है जबकि पाश्चात्य काव्यशास्त्र में शैली की विवेचना भाषण कला (Rhetoric) के संदर्भ में शुरू हुई थी। पश्चात् लिखित भाषा के स्वरूप विश्लेषण के संदर्भ में भी उसका प्रयोग होने लगा। भारतीय काव्यशास्त्री साहित्य अथवा काव्य–भाषा के 'पदसंघटनाक्रम' को, 'विशिष्ट पद–रचना' या 'वचन–विन्यास' को ध्यान में

Copyright : © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

रखकर रीति के स्वरूप को समझाने का उपक्रम करते रहे। उन्होंने पाश्चात्य काव्यशास्त्रियों की तरह भाषा को इस एक विशेष क्रम में प्रयोग किए जाने के पीछे छुपे कवि व्यक्तित्व को कुछ खास महत्व नहीं दिया। भारतीय काव्यशास्त्र में रीति को काव्य भाषा की विशेष गुणों वाली पद–रचना माना जाता है जबकि पाश्चात्य काव्यशास्त्र में शैली को मुख्य तथा कवि के विशिष्ट व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति मानने का चलन है।

'रीति' का अर्थ है लिखने का क्रम या विधान। लिखने का यह क्रम या विशिष्ट पद–संघटन प्रत्येक कवि की अपनी निजी विशिष्टता होती है। पद–संघटन की यह निजी विशिष्टता ही कवि के मैनरिज्म या रीति या पंथ का निर्माण करती है। पूर्व से प्रचलित संस्कृत काव्य रचनाओं में प्रयुक्त भाषा की विशिष्टताओं को परखने पर काव्यशास्त्रियों को उनमें विशेष प्रकार की पद–रचना के दर्शन हुए। संस्कृत तथा उसके गहरे प्रभाव वाली हिन्दी भाषा की 'रीति' में जो लम्बी–लम्बी समास–युक्त रचनाएं थीं, वहीं उनकी विशिष्टता थी और इस पद–रचना से ही वे जान पाए कि काव्य की भाषा व्यवहारिक भाषा से भिन्न होती है। रीति से सम्बन्धित कुछ प्रसिद्ध परिभाषाएं इस बात की पुष्टि करता है। वामन के अनुसार 'रीति' का अर्थ विशेष प्रकार की पद–रचना है। राजशेखर रीति को 'वचन–विन्यास–क्रम' कहते हैं। विश्वनाथ एवं विद्यानाथ के अनुसार रीति का अर्थ 'पद का संयोजन' है। सिंगभूपाल के मत में रीति 'पद–विन्यास भंगिमा' है। इन परिभाषाओं पर विचार करने से ज्ञात होता है इन काव्यशास्त्रियों ने रीति के संदर्भ में लेखन में परिलक्षित होने वाले पदों या पद–संघटन की विशेष प्रकार की रचना, विन्यास, संयोजन तथा भंगिमा को मानदण्ड के रूप में प्रयोग किया था। प्रश्न उठता है कि काव्यभाषा की पद–रचना या पद–विन्यास अगर विशेष है तो यह विशेषता उनमें होती कहाँ है? इसके प्रत्युत्तर में वामन कहते हैं कि वह 'गुण' में होती है अर्थात् रीति, विशेष पद–रचना है और यह विशेषता अपनी–अपनी पद रचनाएं अपने में समाहित करने वालों गुणों में होती है। इस तरह से कुछ विशेष गुणों से समाविष्ट या गुण विशेष वाली पद रचना ही रीति है और ऐसी रीति को ही वामन काव्य की आत्मा मानते हैं।

रीतिशास्त्र या रीति काव्य लिखने की परम्परा हिन्दी में संस्कृत साहित्य से प्राप्त हुई है, लेकिन रीतिशास्त्र या रीति–काव्य का जो वास्तविक अर्थ है उसये भिन्न और विशिष्ट अर्थों में। संस्कृत काव्यशास्त्रियों जैसे वामन ने रीति को उसी प्रकार काव्य की आत्मा माना जैसे रस और ध्वनि। ऐसी स्थिति में रीतिशास्त्र के अन्तर्गत केवल उन्हीं ग्रंथों की चर्चा होनी चाहिए थी जिनमें रीति को काव्य की आत्मा मानकर काव्य के स्वरूप का विश्लेषण किया गया हो। किन्तु हिन्दी साहित्य के इतिहासकारों ने उत्तर–मध्य काल को 'रीतिकाल' की संज्ञा देते हुए रीति को व्यापक अर्थ में ग्रहण किया। उन्होंने रीति या मार्ग को काव्य–रीति या काव्य–लक्षण के रूप में ग्रहण करके उस काल को रीति काल कहा है। ऐसी स्थिति में रीतिशास्त्र के अन्तर्गत केवल रीति–सिद्धान्त की रचना करने वाले ग्रन्थ ही नहीं वरन् उन सभी ग्रंथों का समावेश हो जाता है जिनमें काव्य के लक्षण देने का प्रयत्न किया गया हो। अतः हिन्दी साहित्य में रीतिशास्त्र या सम्प्रदाय का तात्पर्य उन लक्षण देने वाले या सिद्धान्त चर्चा करने वाले सभी ग्रंथों से है जिनमें अलंकार, रस, रीति, वक्रोक्ति, ध्वनि आदि के स्वरूप, भेद, अवयवों आदि के लक्षण दिए गए हों। ऐसे ही रीति–काव्य उस काव्य को रहेंगे जिसमे अलंकार, रस, रीति, वक्रोक्ति आदि के उदाहरण के रूप में या इनका ध्यान रखकर काव्य रचना हुई हो, भले ही इनके लक्षण न भी दिए गए हों।

रीति शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम वामन ने किया है। भोज की परिभाषा को ग्रहण करते हुए 'रीति' शब्द के अर्थ पर आचार्य बल्देव उपाध्याय ने लिखा है– ''रीति' शब्द रीड्. धातु से क्विन प्रत्यय के योग से बनता है। अतः रीति का व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ है–मार्ग। पन्था, विथि, गति, प्रस्थान, सब रीति के ही पर्यायवाची शब्द

हैं।'' वह मार्ग, पन्थ या विथि जिसमें काव्य के अन्तर्गत शब्द–विन्यास की कला बतायी जाए, रीति कहलाती है। जैसे शरीर में अंग–विन्यास का महत्व है वैसे ही काव्य में शब्द–विन्यास का जो अंग जहाँ, जैसा होना चाहिए वहाँ, वैसा हो तभी वह सुन्दर लगता है। कान की जगह आँख या आदमी का कान हाथी के कान जितना बड़ा हो जाए तो उसका सौंदर्य कम हो जाएगा। इसी तरह जहाँ, जैसा शब्द प्रयोग उचित हो वहाँ वैसा होने पर ही काव्य में सुन्दरता आती है। काव्यशास्त्र में 'रीति' का प्रयोग दो अर्थों में होता है–एक काव्य रचना की पद्धति, शैली आदि के अर्थ में तथा दूसरा, संस्कृत के एक सम्प्रदाय–विशेष के अर्थ में और वह सम्प्रदाय है, आचार्य वामन (9वीं शती) द्वारा प्रवर्तित रीति सम्प्रदाय। यद्यपि वामन से पूर्व भामह और दण्डी ने रीति की विवेचना की है, किन्तु इनमें से किसी ने भी रीति का लक्षण और परिभाषा नहीं बताई। सर्वप्रथम वामन ने 9वीं शती में रीति के लक्षण बताते हुए उसकी परिभाषा की इस तरह से रीति शब्द के प्रथम उपयोगकर्ता, रीति के लक्षणकर्ता के रूप में वामन ही रीति सम्प्रदाय के संस्थापक हैं।

आचार्य दण्डी जिसे 'मार्ग' कहते हैं उसे ही सर्वप्रथम वामन में 'रीति' कहा है। 'रीति' शब्द का काव्य या काव्य–मार्ग के व्यापक अर्थ में प्रयोग करते हुए उन्होंने उसकी व्युत्पत्तिमूलक व्याख्या भी की है–

विशिष्ट पद–रचना रीतिः
विशेषो गुणात्मा

अर्थात विशिष्ट पद–रचना ही रीति है। यहाँ विशिष्ट का अर्थ है गुणसम्पन्न–विशेषा गुणात्मा। इस प्रकार कह सकते है कि वामन काव्य का आधार रीति को तथा रीति का आधार गुण को मानते हैं– अतः गुण ही काव्य का सर्वोत्तम तत्व सिद्ध होता है। वामन के मत से रीति काव्य की आत्मा है। विशिष्ट पद–रचना रीति हुई। उनकी दृष्टि में रीति के प्रमुखतः तीन प्रकार हैं। वैदर्भी, गौडीया और पांचाली। विदर्भादि देशों में प्रचलित रीति वैदर्भी है। यह वैदर्भी रीति समग्र गुणों से युक्त होती है। यह दोषरहित, वीणा के स्वरों के समान मधुर कुछ इस प्रकार से विशिष्ट है, जो कि शब्द और अर्थ के चमत्कार से भिन्न है। गौडीया रीति में 'ओज' और 'कान्ति' नामक गुण ही होते हैं। इसमे समास का बहुत प्रयोग होता है तथा यह उग्र पदों वाली रीति होती है। वैदर्भी और गौडी के अतिरिक्त वामन ने एक तीसरे भेद 'पांचाली' की कल्पना की। इसमें माधुर्य और सुकुमारता का बाहुल्य होता है। वामन के अनुसार यदि काव्य की आत्मा रीति है तो रीति की आत्मा है वैदर्भी रीति। वैदर्भी ही ऐसी रीति है जिसमें दसों गुणों का पूर्ण परिपाक देखा जाता है। वैदर्भी रीति ही सर्वश्रेष्ठ रीति है।

वामन के पश्चात् परवर्ती आचार्यों ने रीति की परम्परा को आगे बढ़ाया रूद्रट ने वामन की तीन रीतियों के अतिरिक्त एक चौथे भेद–'लाटी' की उद्भावना की। साथ ही साथ उन्होंने रीतियों के एक सामान्य आधार की भी कल्पना की। उनके विचार से समास ही रीति का निर्णायक तत्व है– जहाँ समास बिल्कुल न हों वह वैदर्भी, जहाँ लघु हो वह पांचाली और जहाँ मध्य समाज व दीर्घ समास हों, वे क्रमशः लाटी व गौडी रीति मानी जानी चाहिए। इसके अतिरिक्त किस रस में कौन सी रीति प्रयुक्त होनी चाहिए इसका भी विवेचन उन्होंने किया है, जैसे श्रृंगार, करुण आदि में वैदर्भी और पांचाली या रौद्र में गौडी का प्रयोग होना चाहिए।

राजशेखर ने प्रवृत्ति, वृत्ति एवं रीति के अन्तर को सुस्पष्ट करते हुए रीति सम्बन्धी पूर्व विवेचन को व्यवस्थित रूप में प्रस्तुत किया। उनके अनुसार –''वेष–विन्यास क्रमः प्रवृत्ति, विलास–विन्यास क्रमों वृत्तिः, वचन–विन्यास क्रमो रीतिः'' अर्थात् वेष–विन्यास का प्रकार प्रवृत्ति है, विलास–विन्यास का प्रकार वृत्ति तथा वचन–विन्यास का प्रकार रीति है। अर्थात् प्रवृत्ति का सम्बन्ध वेषभूषादि, वृत्ति का क्रिया–कलाप–व्यवहार तथा रीति का सम्बन्ध भाषा एवं बोल–चाल आदि से है। रीति के भेदों के अन्तर्गत राजशेखर ने रूद्रट की लाटी

के महत्व को स्वीकार न कर केवल वैदर्भी, पांचाली एवं गौडी को ही मान्यता दी। राजशेखर के मतानुसार वैदर्भी समास रहित, स्थानानुप्रास तथा योगवृत्ति से युक्त पांचाली अल्पसमास, स्वल्पानुप्रास और उपचार–वृत्ति से युक्त तथा गौडी दीर्घ समास, अनुप्रासयुक्त तथा योगवृत्ति परम्परायुक्त होती है।

'वक्रोक्तिजीवितम्' के लेखक आचार्य कुन्तक ने रीति की अवधारणा में महत्वपूर्ण परिवर्तन उपस्थित करते हुए उसे 'कवि–स्वभाव' के रूप में ग्रहण किया। उन्होंने काव्यशैली या रीतियों के प्रादेशिक वर्ग–विभाजन को अस्वीकार करते हुए माना कि 'रीति' कवि मार्ग है तथा कवि जनों के स्वभाव क्रम से इसका ग्रहण होता है। उनके शब्दों में 'कविस्वभावभेदत्वात् मार्गः (रीतिः) है। वे मार्ग को तीन भागों में विभक्त करते हैं– सुकुमार विचित्र तथा मध्यम।

सम्प्रति तत्र ये मार्गाः कविप्रस्थानहेतवः।
सुकुमारो विचित्रश्च मध्यमश्चोमयात्मकः।।

दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि यह वर्गीकरण क्रमशः सरल शैली, चमत्कार शैली तथा समन्वित शैली के उदाहरण हैं। सुकुमार मार्ग में प्रतिभा–जनित सहज नैसर्गिक गुणों एवं विशेषताओं का समावेश रहता है। उक्ति–वैचित्रय या अलंकार अनायास और सहज रूप से आते हैं। इसमें रसप्रवणता होती है तथा प्रसाद एवं माधुर्यगुण का बाहुल्य होता है। विचित्र मार्ग आलंकारिक मार्ग या कला–मार्ग है। इसमें वर्ण–चमत्कार, शब्द–चमत्कार, पदावली लालित्य, अर्थ की वक्रता, उक्ति की विचित्रता आदि विशेषताएं होती हैं। मध्यम मार्ग सन्तुलित मार्ग है। सुकुमारता और विचित्रता का सहज समन्वय इस मार्ग में होता है। इसमें भाव एवं कला की विशेषताएं समान रूप से विद्यमान रहती हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि आचार्य कुन्तक का रीतिभेद सहजता एवं अलंकृति पर आधारित है। कुन्तक ने रीति को कवि–प्रस्थान हेतु कहते हुए रीति का निर्णायक आधार कवि–स्वभाव को बताया है।

भोज ने वैदर्भी, गौडी, पांचाली और लाटी के अतिरिक्त दो और नए भेदों– आवन्तिका और माधवी की सृष्टि करके उनकी संख्या छः तक पहुँचा दी किन्तु परवर्ती विद्वान वामन के तीन भेदों को ही मानते रहे। भोज के अनुसार रीति की व्युत्पत्ति–मूलक परिभाषा है–

वैदर्भादि–कृतः पन्थाः काव्ये मार्ग इति स्मृताः।
रीड्.गताविति धातोस्सा व्युत्पत्त्या रीतिरुच्यते।।

अर्थात् वैदर्भादि पन्था (पथ) काव्य में मार्ग कहलाते हैं। गत्यर्थक 'रीड्.' धातु से व्युत्पन्न होने के कारण वही रीति कहलाती है। इस प्रकार भोज ने मार्ग, पन्थाः या पथ और रीति को व्युत्पत्ति–परक अर्थ में पर्याय सिद्ध करते हुए तीनों की अभिन्नता प्रतिपादित की है। उनके अनुसार रीति का अर्थ कवि–गमन–मार्ग है जिसे कुन्तक ने कवि–प्रस्थान हेतु कहा है। परवर्ती आचार्य रीति एवं वृत्ति को समाविष्ट करने का प्रयास करते हैं। आचार्य सिंह भूपाल 'पदविन्यास भंगी रीतिः' के रूप में परिभाषित करते हुए रीति को तीन भागों में विभक्त करते हैं– कोमला (वैदर्भी), कठिना (गौडीया) तथा मिश्र (पांचाली)। काव्यप्रकाशकार भम्मट वर्णानुयायी माधुर्य, ओज, प्रसाद गुणों की चर्चा करते हुए उपनागरिका (माधुर्ययुक्त), परुषा (ओज युक्त), कोमला (प्रसाद युक्त) इन तीन वृत्तियों मे वैदर्भी, गौडीया तथा पांचाली रीति को सन्निविष्ट करते हैं।

सारांशतः, यह स्पष्ट है कि भारतीय काव्य–शास्त्रियों ने कवि की अनुभूति को विशिष्ट पद–रचना द्वारा अभिव्यक्त करने के क्रम को मार्ग या रीति की संज्ञा दी है। काव्य रचना की इस 'रीति' का अध्ययन रीति–सम्प्रदाय में किया गया है। भारतीय काव्य–शास्त्री साहित्य अथवा काव्य भाषा के 'पद संघटना

क्रम' को 'विशिष्ट पद–रचना' या 'वचन–विन्यास' को ध्यान में रखकर रीति के स्वरुप को समझाने की कोशिश करते रहे हैं और उनके अनुसार काव्यभाषा की विशेष गुणों वाली पद रचना 'रीति' है।

सन्दर्भ–सूची :

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास, डा0 नगेन्द्र, मयूर प्रकाशन
2. काव्यशास्त्र, भगीरथ मिश्र, विश्वविद्यालय प्रकाशन, बाराणसी
3. काव्य के तत्व, देवेन्द्र नाथ शर्मा, लोकभारती प्रकाशन
4. भारतीय काव्यशास्त्र की भूमिका, डा0 नगेन्द्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस
5. भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य सिद्धान्त, गणपति चंद्र गुप्त, लोकभारती प्रकाशन
6. काव्यार्थ चिन्तन, जी.एस. शिवरुद्रप्पा, साहित्य अकादमी
7. भारतीय काव्यशास्त्र, प्रो0 योगेन्द्र प्रताप सिंह, लोकभारती प्रकाशन
8. हिन्दी साहित्य का अतीत (दूसरा भाग–श्रृंगार काल), आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, वाणी प्रकाशन।